भारतीय संस्कृति समाजवादी दर्शन और डॉ. राममनोहर लोहिया

नमूना • SAMPLE

SAMPLE

भारतीय संस्कृति समाजवादी दर्शन और डॉ. राममनोहर लोहिया

डॉ. अखिलेश त्रिपाठी

अखण्ड पब्लिशिंग हाऊस
दिल्ली (भारत)

नमूना • SAMPLE

द्वारा प्रकाशित

अखण्ड पब्लिशिंग हाऊस

Publisher, Distributor, Exporter having an Online Bookstore

एल–9ए, प्रथम तल, गली न0 42,
सादतपुर एक्सटेंसन, दिल्ली–110094 (भारत)
Phone : 9968628081, 9555149955, 9013387535
E-mail : akhandpublishinghouse@gmail.com
akhandpublishing@yahoo.com
Website : www.akhandbooks.com

भारतीय संस्कृति समाजवादी दर्शन और डॉ. राममनोहर लोहिया

संस्करण : 2020
© लेखक
ISBN: 978-81-945367-8-9

सर्वाधिकार सुरक्षित। इस प्रकाशन के किसी भी हिस्से को प्रकाशक की पूर्व अनुमति के बिना इलेक्ट्रॉनिक या किसी अन्य माध्यम द्वारा पुनः प्राप्ति समेत किसी भी रूप में प्रतिलिपिकृत, अनुवादित, संगृहीत नहीं किया जा सकता है और न ही किसी भी रूप में या किसी भी माध्यम द्वारा इसे प्रसारित किया जा सकता है।

इस पुस्तक में लेखक द्वारा व्यक्त विचार उनके व्यक्तिगत हैं जिसका प्रकाशक से कोई संबंध नहीं है।

भारत में प्रकाशित

झपसू यादव द्वारा 'अखण्ड पब्लिशिंग हाउस' के लिए प्रकाशित। वी.एम. ग्राफिक, दिल्ली द्वारा कवर डिजाइन व शब्द संयोजन तथा आरना इंटरप्राइजेज, दिल्ली से मुद्रित।

नमूना • SAMPLE

समर्पण

पिता श्री सत्येन्द्र नाथ
माता जी श्रीमती सुनीता
एवं
सहोदर विश्वेश को
सादर

नमूना • SAMPLE

नमूना • SAMPLE

भूमिका

समाजवाद एक ऐसा सपना है जिसने बीसवीं सदी में दुनिया को सर्वाधिक आन्दोलित किया। वर्तमान शताब्दी में भी दुनिया के अलग–अलग कोनों में अलग–अलग ढंग से लोग इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए संघर्ष करते रहेगें। इसमें किसी प्रकार की आशंका नहीं है। वर्तमान उदारीकरण के परिवेश में भी जब तक समाज में विषमता की स्थिति बनी रहेगी, समाजवाद नैसर्गिक रूप में जीवन्त रहेगा। यह मात्र पूंजीवाद के विरूद्ध प्रतिक्रिया नहीं है। प्रत्युत यह वह शाश्वत विचार है, जो विषमता एवं अन्याय के विरूद्ध संघर्ष की निरन्तरता का प्रतीक है। जैसे ईश्वर की प्राप्ति के लिए अलग–अलग मार्ग खोजे एवं बनाये जाते रहे है, वैसे ही विषमताओं का उन्मूलन करके समता परक समाज व्यवस्था के निर्माण के लिए भी प्रयोग किये जाते रहे हैं परन्तु उन सबकी मूल प्ररेणा और उद्देश्य एक रहा है।

बीती सदी के प्रारम्भ में जब दुनिया के अनेक देशों में समाजवादी समाज रचना के अनेक प्रयोग हो रहे थे, भारत के स्वतन्त्रता संग्राम में सक्रिय नौजवानों के एक समूह ने किसी एक अन्तर्राष्ट्रीय केन्द्र से न बंध कर समाजवाद का आयात करने के स्थान पर अपने ही देश की माटी और संस्कृत से एक नयी व्यवस्था की रचना के संघर्ष का सूत्र पात किया। इनमें पंडित नेहरू, आचार्य नेरन्द्र देव, जय प्रकाश नारायण, युसूफ मेहर अली, अच्युत पटवर्धन, अशोक मेहता, मोनू मसानी, एन0 जी0 गोरे, सम्पूर्णानन्द, कमलादेवी चट्टोपाध्याय, डॉ0 राम मनोहर लोहिया

और एस0 एम0 जोशी आदि भारतीय समाजवादी आन्दोलन के प्रमुख संस्थापक कहे जा सकते हैं।

ये मनस्वी तपस्वी कांग्रेस के अन्दर ही अपना एक अलग मंच बना कर स्वराज आन्दोलन पर समाजवादी रंग चढ़ाने का प्रयास कर रहे थे। शुरू में महात्मा गांधी को यह अच्छा नहीं लगा था, परन्तु बाद में उन्होनें आजादी और समाजवाद के दीवानों की इस टोली का महत्व समझा। समाजवादियों को शायद यह समझने में देर लगी कि महात्मा गांधी का कर्म और दर्शन वास्तव में समाजवाद के लक्ष्यों पर ही आधारित था भले ही वे इस शब्द का प्रायोग उतना नहीं करते थे। पंडित नेहरू एवं डॉ0 लोहिया इसी भावधारा के सशक्त हस्ताक्षर हैं। स्वतंत्रता के पश्चात् समाजवादी आन्दोलन के दो प्रवर्ग थे क्रमशः सत्ता पक्ष एवं विपक्ष। सत्तापक्ष का नेतृत्व देश के प्रधानमन्त्री पंडित नेहरू कर रहे थे जबकि विपक्षी समाजवाद के तीन स्तम्भ थे– आचार्य नरेन्द्र देव, लोकनायक जय प्रकाश नारायण और डॉ0 राम मनोहर लोहिया। ये विभूतियाँ हमारे बीच नहीं हैं लेकिन इनके कर्म और विचार युगों तक प्रासंगिक बने रहेंगे।

भारत में समाजवादी चिन्तन के बीज अति प्राचीन काल से ही पाये जाते रहे हैं और ऋग्वेद तथा धर्मग्रंथो में विशेषकर धम्म पद में मानव एकता, मातृत्व और आधुनिक समानता के सिद्धान्तों के दर्शन होते है परन्तु आधुनिक अर्थ में समाजवादी चिन्तन बीसवीं शताब्दी की उपज है। आर्थिक तथा सामाजिक पुनर्निमाण के दर्शन के रूप में समाजवाद भारत में पश्चिम के प्रभाव से ही विकसित तथा लोकप्रिय हुआ है।

भारत में आधुनिक समाजवाद के चिन्हों को लें, तो कहना होगा कि समाजवादी तत्वों का प्रथमतः दर्शन महर्षि अरविन्द के उन लेखों में होता है जिन्हें 1893 में इन्दु प्रकाश नामक पत्र मे "पुराने के बदले नव दीप" शीर्षक के अन्तर्गत प्रकाशित कराया। इन लेखों में महर्षि अरविन्द ने कांग्रेस की मध्यम वर्गीय मनोवृति की आलोचना करते हुए सर्वहारा की दशा सुधारने का आग्रह किया था। 1908 में लोकमान्य तिलक ने "केसरी" के लेखों में इसकी चर्चा की। लाला लाजपत राय सम्भवतः वे

प्रथम भारतीय थे जिन्होंने समाजवाद और बोल्शेविकवाद पर कुछ लिखा। बोल्शेविकवाद के प्रति लाला लाजपत राय का कोई सहानुभूति पूर्ण दृष्टिकोण नहीं था, तथापि अपनी पुस्तकों में उन्होनें कांग्रेस पर पूंजीपति अधिपत्य की कटु आलोचना की थी। 1920 में "इण्डियन ट्रेड यूनियन कांग्रेस" के अधिवेशन का सभापतित्व भी लालाजी ने किया। एम0 एन0 राय जिन पर मार्क्सवाद का प्रभाव था, भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के बुर्जुआ वर्ग द्वारा संचालन की आलोचना की थीं। चितरंजन दास रूसी क्रान्ति से अनुप्राणित अवश्य हुए तथापि क्रान्ति के प्रति उनमें कोई सहानुभूति पूर्ण आकर्षण नहीं था। दास यद्यपि समाजवादी नहीं थे, किन्तु उन्होनें भारत के ट्रेडयूनियन आन्दोलन के सम्बन्ध में बड़ी सहायता पहुँचायी। भारत में समाजवादी चिन्तन को प्रोत्साहन देने में पंडित जवाहरलाल नेहरू का महत्वपूर्ण योगदान रहा। 1926 में उन्होंने सोवियत संघ की यात्रा की। पंडित नेहरू ने "सोवियत रसिया" नामक एक लघु पुस्तिका में रूस की तत्कालीन उपलब्धियों का प्रशंसात्मक चित्र उकेरा और "विश्व इतिहास की झलक" तथा "आत्मकथा" में कार्ल मार्क्स के वैज्ञानिक एवं आर्थिक पद्धति की भरपूर प्रशंसा की। इन पुस्तकों में हमें आर्थिक एवं सामाजिक व्यवस्था की विशद विवेचना मिलती है।

भारत में समाजवादी चिन्तन का आरम्भ तो काफी पहले ही हो चुका था परन्तु समाजवादी आन्दोलन का वास्तविक श्री गणेश मई 1934 से हुआ जब "कांग्रेस समाजवादी दल" की स्थापना हुई। यह "भारत में समाजवाद के संगठनात्मक विकास" में एक महत्वपूर्ण घटना थी और इसी की स्थापना से सभी प्रान्तीय समाजवादी संगठनो और गुटों को अखिल भारतीय आधार पर मंच मिल गया। 1931 में बिहार में, 1932–33 में नासिक के केन्द्रीय कारावास में 1933–34 में उत्तर प्रदेश तथा बम्बई प्रान्तों में समाजवादी गुट स्थापित हो चुके थे, और इन्हीं गुटों ने वास्तव में कांग्रेस समाजवादी दल के बीच कार्य किया। समाजवादियो का प्रथम अखिल भारतीय सम्मेलन 17 मई 1934 को पटना में आचार्य नरेन्द्र देव की अध्यक्षता में हुआ।

कांग्रेस समाजवादी दल के प्रमुख प्रतिपादकों में जय प्रकाश नारायण, डॉ0 लाहिया, अशोक मेहता, आचार्य नरेन्द्र देव, अच्युत पटवर्धन, एम0 आर0 मसानी, कमला देवी चट्टोपध्याय, पुरूषोत्तम विक्रम दास, युसूफ मेहर अली और गंगा शरण सिंह थें। ये दस समाजवादी नेता जो समाजवादी आन्दोलन के प्राण समझे जाते थे, अत्यन्त ही योग्य नवयुवक उत्तर प्रदेश के कांग्रेसी और मुख्यतः शहरी मध्यम वर्ग के व्यक्ति थे जिनमें से अनेको ने अपनी राजनीतिक विचार धारा के कारण परिवार या विवाह तक का त्याग कर दिया था।

सैद्धान्तिक रूप से ये समाजवादी नेता तीन मिश्रित प्रवृत्तियों में विभाजित थे – (1) मार्क्सवादी (2) ब्रिटिश श्रमिक दल की भाँति सामाजिक लोकतंत्रवादी (3) लोकतन्त्रात्मक समाजवादी जिन पर गांधी जी के विकेन्द्रीकरण के सिद्धान्त तथा सविनय अवज्ञा के राष्ट्रवादी आन्दोलन का एवं वर्ग संघर्ष का प्रभाव था। इन प्रवृत्तियों के मध्य एक अशान्त समझौता था। ये समस्त समाजवादी राष्ट्रीय स्वतंत्रता एवं समाजवादी समाज की संरचना के व्यापक उद्देश्य से एक निष्ठ थे।

समाजवादी दल दो मुख्य उद्देश्यों को एक साथ साध रहा था। प्रथमतः वह कांग्रेस को यह विश्वास दिलाना चाहता था कि राष्ट्रीय मुक्ति संघर्ष की सफलता के लिए आन्दोलन में मजदूरों एवं किसानों को सहभागी बनाया जाये, क्योंकि जब तक आन्दोलन अपने आकार में विस्तार कर व्यापकता नहीं लायेगा तब तक वह सफल नहीं हो पायेगा। द्वितीय कांग्रेस समाजवादी दल साधारण जनता को यह संदेश देना चाहता था कि वह जनता के जीवन स्तर और कार्य की दशाओं में सुधार के लिए जो संघर्ष कर रहा है, वह औपनिवेशिक दासता से मुक्ति पाने के एक राजनीतिक संघर्ष का अंगमात्र है। कांग्रेस समाजवादी दल ने इस बात का सतत् प्रयास किया कि कांग्रेस इस बात को समझे कि मुक्ति संग्राम की सफलता के लिए यह आवश्यक है कि वह इस बात को जनता को समझाए कि कांग्रेस भयानक सामाजिक, आर्थिक विषमताओं को दूर कर जनता के जीवन स्तर में परिवर्तन लायेगी।

भारतीय समाजवादी देश के स्वतन्त्रता संघर्ष में कांग्रेस के साथ सदैव सहयोग करते रहे। देश के समाजवादी चिन्तकों की मुख्य देन रही है कि, उन्होंने मार्क्स के उद्देश्यों तथा तकनीकों का राष्ट्रीय स्वतन्त्र संघर्ष के साथ ताल–मेल बिठाने का प्रयत्न किया। इस क्षेत्र में समाजवादी भावधारा के लोग साम्यवादी लोगों से अधिक सफल हो सके। समाजवादियों ने राष्ट्रीय आन्दोलन में जो योगदान दिया उसने कई कट्टर राष्ट्रवादियों को यह मानने पर बाध्य किया कि राष्ट्रवाद और समाजवाद में मूल रूप से कोई भिन्नता नहीं है। यह वास्तव में समाजवादियों की सबसे बड़ी उपलब्धि थी। 1947 में कांग्रेस समाजवादी दल के कानपुर अधिवेशन में दल के नाम से कांग्रेस शब्द हटा दिया। 1948 में समाजवादियों ने कांग्रेस पार्टी से पृथक होकर भारतीय समाजवादी दल नामक एक पृथक दल की स्थापना कर ली। स्वतन्त्रता के पश्चात् समाजवादी दल टूट, एकीकरण एवं बिखराव की लम्बी कहानी है। बाद में कांग्रेस पार्टी ने अपना लक्ष्य समाजवाद को बनाया। स्थूल रूप से ही सही भारतीय राजनीति में समाजवाद श्रेय, प्रेय, पाथेय बन गया। भारतीय समाजवादी चिन्तन के स्वरूप पर विहंगम दृष्टि से अवलोकन करने से यह बात स्पष्ट है कि भारतीय समतावादी चिन्तन का विकास यूरोपिय समाजवाद के सन्र्दभ में दो बातों से भिन्न रहा है। प्रथमतः भारत में समाजवाद का इतिहास सामाजिक तथा आर्थिक पुनर्निमाण की एक योजना के रूप में नही हुआ बल्कि वह क्रूर विदेशी साम्राजवाद के बन्धनों से मुक्ति एक राजनीतिक विचारधारा के रूप में भी विकसित हुआ है। 1900 से 1947 तक भारत की मूल समस्या भारत वर्ष की राजनीतिक स्वतंत्रता थी और कोई भी लोकप्रिय दल उसकी उपेक्षा नहीं कर सकता था। द्वितीय भारतीय समाजवादी चिन्तन के लिए यह आवश्यक था कि वह खेत मजदूरों एवं किसानों के जीवन स्तर को ऊँचा उठाने का प्रयास करे। क्योंकि भारत में अभी सामन्तवाद विद्यमान था। देश के समाजवादी नेताओं ने प्रारम्भ मे अपनी प्रभावी भूमिका का निर्वहन किया लेकिन आगे चलकर वे आपसी फूट के शिकार बन गये

और अपना प्रभाव धीरे–धीरे खोने लगे। भारतीय समाजवादियों ने तीन प्रमुख समस्याओं पर गम्भीर चिन्तन किया है– अविकसित अर्थतंत्र में किसानों की भूमिका, वर्ग संघर्ष तथा नियोजन। भारतीय समाजवादी लोकतांत्रिक तरीके से राजनीतिक स्वतंत्रता एवं आर्थिक पुनर्निमाण का परस्पर समन्वय चाहते हैं। संसदीय लोकतन्त्र में इनकी अनन्य आस्था है। गांधीवाद तथा भारतीय शासन के लोकतान्त्रिक परिवेश से अनुप्राणित होकर भारतीय समाजवादियों ने अपने समाजवाद को पूर्णतः अहिन्सक बनाया तथा पाश्चात्य समाजवादियों के विपरीत आर्थिक विकेन्द्रीकरण का प्रबल पक्ष पोषण किया। सम्भवतः विकेन्द्रीकरण का प्रबल अनुसमर्थन, भारतीय समाजवाद को, गांधीवाद से विरासत के रूप में मिला है।[1]

वर्तमान उदारीकरण एवं वैश्वीकरण के परिवेश में यह आम धारणा बनती जा रही है। कि समाजवाद अब अतीत की वस्तु या विचारधारा बन गयी है। सोवियत संघ का विघटन तथा चीन द्वारा क्रमशः शनैः शनैः उदारीकरण एवं विश्व बाजार की ओर कदम बढ़ाना, स्वयं भारत में उदारीकरण एवं विनिवेशीकरण की प्रक्रिया अपनी गति में है। परिणामतः आजकल सपनों के नवीनीकरण की बात होती है, उसमें से एक दूसरे को काटने वाले बयान आते है। एक कहता है कि समाजवाद का पुनरूत्थान असम्भव है। इतिहास का अन्त और विचार धाराओं का अन्त कहने वाले ऐसा मानते है। इनका मानना है कि मानव सभ्यता ने जो हासिल करना था कर लिया। विचारधारा के माध्यम से मानव सभ्यता में गुणात्मक परिवर्तन सम्भव नहीं है। दूसरा तबका मानता है कि समाजवाद के बिना कोई अब चारा नहीं रहेगा। परन्तु यह कमजोर बयान है।

सत्य है कि समाजवाद उन्नीसवीं सदी में आया। यह किस का परिणाम, उत्पत्ति या बाई प्रोडक्ट है? जिस का यह बाई प्रोडक्ट है वह चीज मानव समूहों में सदैव रही है और उसके नये–नये रूप, नये–नये संस्करण विभिन्न युगों में सामने आते हैं। हम कहते हैं, एक शब्द है इन्सान। यह शब्द प्रिय है। इन्सान का मतलब एक सार्थक जीव है जिसको प्यार देना है वही इन्सान है। जब से मनुष्यों का समाज शुरू

हुआ है तब से उसमें एक धारा ऐसी रही है जो प्रत्येक मनुष्य को इन्सान के रूप में सम्मानित जीवन जीते हुए देखना चाहती है। मनुष्य में यह जो आस्था है यह मनुष्य का जातीय मूल्य है। इक्कीसवीं सदी में जब हम मूल्यांकन करते है कि मनुष्य सभ्य हुए हैं या नहीं इसकी कसौटी क्या होनी चाहिए ? मनुष्य एक प्रजातीय अवधारणा है और इसका प्रजातीय मूल्यांकन होना चाहिए। इसीलिए सभ्यता का मूल्यांकन करते समय प्रत्येक मनुष्य की सम्मान की जिन्दगी है, या नहीं इसको देखना चाहिए। मनुष्य में यह आस्था आधुनिक होकर भी चिरन्तन है। समाजवाद ने संगठित रूप से एक प्रजाति के रूप में मनुष्य को परिभाषित किया है। इस दृष्टि से सभी मनुष्य बराबर हैं। सभी भाई–भाई हैं। समाजवाद इसी आस्था का प्रतीक है। समाजवाद एक पद्धति है। इसीलिए जीवन में ऐसी शक्तियाँ कार्यरत होंगी, तो उसमें ऐसी धाराएँ उत्पन्न होगी, जो प्रत्येक चीज को पैदा करेगी। समाजवाद शब्द के रूप में नया पुराना हो सकता है परन्तु मूल वस्तु वहीं रहेगी। एक अरब के इस देश में अपनी पूंजी अपने संसाधनों के आधार पर भी हम विकास कर सकते है। यह सपना देखकर ही हम समाजवाद का सपना देख पायेंगे। इस तरह भारत एवं विश्व में जब तक असमानता विद्यमान है समाजवाद जीवन्त है।

इसी दृष्टि से "पंडित नेहरू एवं डॉ. लोहिया के समाजवाद का तुलनात्मक अध्ययन" पुस्तक की उपादेयता समीचीन प्रतीत होती है। स्वतंत्रता संग्राम के अपराजेय योद्धा पंडित नेहरू एवं डॉ. लोहिया के समस्त चिन्तन एवं मनन के अभिकेन्द्र में समाजवाद रहा है। समाजवाद के संदर्भ एवं परिप्रेक्ष्य में पंडित नेहरू एवं डॉ. लोहिया द्वारा अभिव्यक्त विचारों का यथासम्भव तुलनात्मक निर्वचन का सद्प्रयास हुआ है। प्रस्तुत शोध प्रबन्ध निम्नलिखित शीर्षकों में विभक्त है– पंडित जवाहर लाल नेहरू एवं डॉ. राम मनोहर लोहिया के अभिप्रेरणा के स्रोत एवं अनुप्राणित करने वाले तत्व, पाश्चात्य देशों में समाजवाद, भारत में समाजवाद, पंडित नेहरू एवं डॉ. लोहिया के सामाजिक विचारों का तुलनात्मक अध्ययन है। पंडित नेहरू एवं डॉ. लोहिया के आर्थिक विचारों का तुलनात्मक अध्ययन, समाजवाद को पंडित नेहरू एवं डॉ. लोहिया का

अवदान एवं पंडित नेहरू एवं डॉ. लोहिया के समाजवादी विचारों का मूल्यांकन।

प्रस्तुत पुस्तक की अध्ययन पद्धति ऐतिहासिक है तथा इसे विवरणात्मक एवं विश्लेषणात्मक शैली में अभिव्यक्त किया गया है।

अखिलेश त्रिपाठी
असिस्टेंट प्रोफेसर
ईश्वर शरण पी.जी.कॉलेज
राजनीति विज्ञान विभाग
इलाहाबाद विश्वविद्यालय

नमूना • SAMPLE

विषय–सूची

	भूमिका	*vii*
1.	डॉ. राममनोहर लोहिया एक असाधारण जीवन वृत्त	1
2.	भारतीय समाजवाद का युगीन संदर्भ और डॉ. लोहिया	15
3.	वैश्विक समाजवाद के विविध रूप और लोहिया	81
4.	डॉ. राम मनोहर लोहिया के सामाजिक विचारों का अध्ययन	110
5.	डॉ. लोहिया के राजनीतिक विचारों का अध्ययन	152
6.	अर्थ दर्शन और डॉ. लोहिया	197
7.	भारतीय संस्कृति और डॉ. राममनोहर लोहिया	259

नमूना • SAMPLE

नमूना • SAMPLE

1

डॉ. राममनोहर लोहिया
एक असाधारण जीवन वृत्त

शैशव अवस्था से प्रौढ़ा अवस्था तक अथवा बुद्धि की कोमलता से परिपक्वता तक के सफर में महत्वपूर्ण महापुरूषों एवं कई विचारों ने डॉ0 राम मनोहर लोहिया के समाजवादी चिन्तन को अभिप्रेरित एवं अनुप्राणित किया।

परिवार ममता का मनोरम मंदिर होता है। पिता का स्नेह भरा संरक्षण एवं माँ के आंचल तले बालक में बौद्धिकता का अंकुरण होता है। परिवार ही शिशु की प्रथम पाठशाला होती है। बचपन में बालक के मस्तिष्क पर पारिवारिक परिवेश में जिस प्रकार का प्रभाव पड़ता है, वह उसके जीवन के साथ सम्पृक्त हो जाता है। डॉ0 राम मनोहर लोहिया भी इसके अपवाद नहीं थे। डॉ0 राम राम मनोहर लोहिया जब ढाई वर्ष के थे उन्हें मातृविहीनता का आघात सहना पड़ा। सम्भवतः प्रकृति की इस क्रूरता ने डॉ0 राम मनोहर लोहिया को कठोर एवं संघर्षशील बना दिया। मातृविहीनता ने ही माँ की ममता से वंचित डॉ0 राम मनोहर लोहिया के हृदय में भारत माँ के प्रति अथाह अनुराग से भर दिया। वह भारत को परतंत्रता की बेड़ियों से विमुक्ति के लिए व्याकुल हो उठे। वह भारत की भूखी नंगी जनता के प्रति संवेदनशील हो उठे तथा उसके राजनीतिक समाधान ढूंढने में तल्लीन हो गये।

SAMPLE

डॉ0 राम मनोहर लोहिया के पिता एक उद्‌भट्ट देश भक्त तथा गांधीवादी पुत्र थे पर अपने पिता के व्यक्तित्व एवं विचार का व्यापक प्रभाव पड़ा।[1]

लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक भारतीय स्वतंत्रता आन्दोलन के दैदिप्यमान नक्षत्र थे। स्वतंत्रता के मुक्ति संग्राम का कोई ऐसा सेनानी नहीं था जो तिलक के उग्र एवं दृढ़ राष्ट्रवाद से अनुप्राणित न हुआ हो। *"स्वतंत्रता मेरा जन्म सिद्ध अधिकार है और मैं इसे लेकर रहूँगा",* तरूणों में तेजस्विता का संचार करता था।

लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक की जब मृत्यु हुई थी तब लोहिया जी बम्बई मे मैट्रिक के छात्रा थे। 1920 में लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक की मृत्यु को उन्होंने गम्भीरता पूर्वक लिया और बम्बई के मारवाड़ी विद्यालय के अपने छात्रा साथियों द्वारा हड़ताल करवा कर उसका नेतृत्व किया। यहीं से डॉ0 राम मनोहर लोहिया के संघर्षमय जीवन का आरम्भ हुआ।[2]

लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक की मृत्यु स्वतंत्रता संग्राम के सेनानियों के लिए बज्रघात थी। जैसे भारतीय ओज आज मौन हो गया हो। किशोर डॉ0 राम मनोहर लोहिया को इस घटना ने अन्दर से झकझोर दिया, उन्होंने लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक की मृत्यु को "महामृत्यु" की संज्ञा दी।[3]

यह तिलक के प्रभाव का ही प्रतिफल था कि डॉ0 राम मनोहर लोहिया ने राजनीति में प्रवेश किया, राजनीति में उनका यह प्रवेश अपने चिन्तन, मनन एवं कर्म के साथ जीवन पर्यन्त जारी रहा।

तत्कालीन राजनीति में (स्वतंत्रता संघर्ष के दौरान) पंडित नेहरू युवा नेता थे। अपने बेबाक वक्तव्यों एवं यथार्थ चिन्तन के कारण नेहरू युवाओं के चहेते नेता थे। तरूण डॉ0 राम मनोहर लोहिया भी इससे अछूते नहीं रहे। प्रारम्भ में गांधी के प्रति लोहिया का झुकाव श्रद्धा से युक्त था परन्तु पंडित नेहरू के प्रति उनके समादर में एक सहजता थी। नेहरू में जो गुण विद्यमान थे उसे लोहिया स्वयम् अपने आप में देखना

चाहते थे अद्म्य साहस, उन्मुक्त स्वतंत्रता, संवेदनशीलता एवं व्यापक मानवीय दृष्टिकोण।

विश्व क्रान्ति एवं विश्व बन्धुत्व का जो सपना उन दिनों देखा जा रहा था और भारतीय नेताओं में जिसका स्वर जवाहर लाल नेहरू में सबसे अधिक मुखर था, उसमें डॉ0 लोहिया जैसे तरूण के लिए एक सहज आकर्षण था। नेहरू ने पूर्ण स्वतंत्रता की आवाज उठायी थी और डॉ0 लोहिया के जर्मनी जाने से पूर्व सन् 1929 में नेहरू की अध्यक्षता में ही कांग्रेस ने पूर्ण स्वतंत्रता को अपना लक्ष्य घोषित किया था। इस घटना ने लोहिया के व्यक्तित्व पर अमिट प्रभाव छोड़ा और डॉ0 लोहिया अडिग निश्चय के साथ स्वतंत्रता संग्राम में कूद पड़े। नेहरू के सहृदय एवं संवेदनशील व्यक्तित्व का प्रभाव भी डॉ0 लोहिया के व्यक्तित्व पर पड़ा।[4]

परन्तु नेहरू का प्रभाव लोहिया पर स्थायी रूप से प्रभावकारी नहीं रहा। आकर्षण का यह तिलिस्म शनैः–शनैः टूटता चला गया। स्वतंत्रता के पश्चात् दोनों महापुरूष नदी के दो किनारों के सदृश्य दिखायी देने लगे।

प्रारम्भ में स्वतंत्रता के पूर्व डॉ0 राम मनोहर लोहिया पर पंडित नेहरू का प्रभाव था। लोहिया ने बार–बार कहा है कि वह केवल एक व्यक्ति से प्रभावित रहे हैं, वह गांधी जी हैं, आधा आदमी जिससे वे प्रभावित थे, वह पंडित जवाहर लाल नेहरू हैं, वह आजादी के पहले वाले नेहरू हैं।[5]

कर्म अल्प आयु में ही जीवन को अमरत्व प्रदान करा देता है। किन्तु जीवन निरन्तर जीवित रहने के बावजूद अमरत्व प्रदान नहीं करा पाता। इतिहास पुरूषों का जीवन भी आयु, वर्ष, महीनों से नहीं वरन् उनके निरन्तर कार्यरत रहने से जाना जाता है। ऐसे कर्म जो कीर्तिमान बनकर प्रकाश स्तम्भ सदृश्य दीपमान हो, उनकी पहचान कठिन होती है पर कर्म की प्रखरता काल के वक्ष पर अपना प्रभाव छोड़ जाता है।

गांधी तो कर्म में इतने डूबे हुए व्यक्ति थे कि उन्हें केवल अगला कदम ही दिखता था। और वह अगला कदम इतना दृढ़ और युगान्तकारी

था इसके लिए प्रमाण ढूढ़ने की जरूरत नहीं है। वह स्वयम् मील के पत्थर की तरह स्पष्ट है।

डॉ0 राम मनोहर लोहिया एवं महात्मा गांधी में कई बिन्दुओं पर मतभेद भी था यथा गांधी के ट्रस्टीशिप की अवधारणा, परन्तु समाजवादी दल के नेताओं में नरेन्द्र देव तथा जयप्रकाश नारायण पर मार्क्सवाद का सबसे अधिक प्रभाव था। उनकी तुलना में लोहिया पर गांधीवादी विचारधारा का प्रभाव अधिक था।[6]

डॉ0 लोहिया ने बार–बार कहा है कि वह केवल एक आदमी से प्रभावित रहे हैं, वह गांधी के प्रति लोहिया का आकर्षण स्वाभाविक था क्योंकि गांधी केवल जीवन दर्शन के व्याख्याता नहीं थे। वह दर्शन के साथ कर्म को भी जोड़ते थे। गांधी का दर्शन किताबी नहीं था। वह साक्षात कर्म से निःसश्त होता था और कर्म की प्रेरणा देता था। कर्म प्रधान होने के नाते वह मूलतः आचरण की कसौटी पर सिद्धान्त को कसता था। डॉ0 लोहिया को लगता था, गांधी जी चाहे जितना सत्य, अहिंसा और धर्म की नितान्त आध्यात्मिक बाते करें, मूलतः अपने लिए भी उन सबको आचरण के स्तर पर ढालते थे, कर्म के स्तर पर साकार करने में विश्वास करते थे।[7]

वस्तुतः महात्मा गांधी एवं डॉ0 लोहिया एक ही कार्यरत जीवन की दो अभिव्यक्तियां हैं।

भारतीय जीवन मूल्यों के प्रति डॉ0 लोहिया की अनन्य आस्था थी। डॉ0 लोहिया ने अपनी पुस्तक *"इण्टरवल डयूरिंग पलिटिक्स"* में योग से लेकर भारतीय पुरातत्व, इतिहास धर्म एवं आध्यात्म सबका विवेचन किया है। उन्होंने पत्थरों की भाषा को पढ़ने की कोशिश की है। यातना शिविर में अपनी असीम सहन शक्ति को योगाभ्यास का एक अंग माना है। मूर्तियों के माध्यम से मनुष्य की जातीय स्मृति और पहचान को व्याख्यायित करने की कोशिश की है। साहित्य, रस, आनन्द, काव्य भाषा, भूषा, भवन इन सबका एक विचित्र निरूपण और व्याख्या हमें उनके आलेखों में मिलती है। भारत के नदियों के प्रति उनके मन में रागात्मक भाव है, विराट समुद्र, समृद्ध समुद्र की अनन्त विस्तृत लहरों में उनकी

जो भावनाएं व्यक्त होती हैं, हिमालय, तिब्बत, उर्वसीयम, नागालैण्ड के प्रति उनकी जो संवेदनाएं हैं और पशु पक्षियों के प्रति उनका जो लगाव है, उन सबके परिप्रेक्ष्य में हमारे सामने डॉ0 लोहिया का एक ऐसा चित्र प्रस्तुत होता है जिसमें भाव बोध एवं समय बोध के परे एक तीसरा आयाम अद्वितीय नैसर्गिक आध्यात्म बोध का भी मिलता है। कहने को डॉ0 लोहिया कहते हैं कि धर्म की जरूरत हमें नहीं पड़ी और स्त्रियों के स्नेह एवं प्यार से वे सदा वंचित रहे।

लेकिन डॉ0 लोहिया का भावुक मन जब भगवान की चर्चा करता है तो राम के रामत्व को राम से बड़ा सिद्ध करता है तथा कृष्ण के कृष्णत्व को कृष्ण से बड़ा मानकर प्रस्तुत करता है। भले ही डॉ0 लोहिया ने कभी किसी ईश्वर के सामने सिर न झुकाया हो लेकिन राम, कृष्ण–शिव लिखने बैठते हैं तो उनके अन्तस्थल की अस्तिकता और उनकी दृष्टि की व्यापकता दोनों ही स्पष्ट रूप से हमारे सामने प्रस्तुत होती है। उनकी भारत माता से प्रार्थना है कि "हे भारत माता मुझे शिव जैसी विशालता, राम जैसी मर्यादा और कृष्ण जैसा उन्मुक्त मन दो। उनकी उच्चतम आस्तिकता का परिचय सहज ही मिल जाता है, जिसे वे लाख छिपाना चाहें छिप नहीं सकती।"[8]

ग्रन्थ "राम–कृष्ण एवं शिव" भारतीयता के प्रति इसी अटूट आस्था का प्रतिफल है। डॉ0 लोहिया गीता, एवं उपनिषदों को भी समादर की दृष्टि से देखते हैं।

यद्यपि भारत की सांस्कृतिक व्यवस्था के कुछ तत्वों का डॉ0 लोहिया ने कटु आलोचना की है यथा जाति व्यवस्था एवं वर्ण व्यवस्था। वह मानते थे कि वर्ण व्यवस्था बल द्वारा निर्मित की गयी एक व्यवस्था है जिसमें गुण–कर्म का कोई मूल्य नहीं है।[9]

राम–कृष्ण एवं शिव के बारे में आध्यात्मिक दर्शन ने डॉ0 लोहिया को कई प्रकार से प्रभावित किया यथा जीवन, समाज के आदर्श निर्धारण में उन्हें उनसे प्रेरणा मिली। इसी प्रकार समाज में व्याप्त विसंगतियों, त्रुटियों अन्यायों को दूर करने के लिए उपयुक्त साधन के चयन निर्धारण में सहायता मिली।[10]

डॉ0 राम मनोहर लोहिया पर जर्मनी के लोकतांत्रिक समाजवाद का अत्यधिक प्रभाव पड़ा था। 1932 में *"नमक सत्याग्रह"* विषय पर डॉ0 राम मनोहर लोहिया ने डॉक्टरेट की डिग्री प्राप्त की। वहां के राजनीतिक चिन्तन एवं परिवेश का प्रभाव उनके सम्पूर्ण साहित्य में देखा जा सकता है। इस प्रभाव के आधार पर उन्होंने "जर्मन सोशलिस्ट पार्टी (1962), नामक ग्रन्थ का प्रणयन किया। डॉ0 लोहिया जब जर्मनी से स्वदेश आये तो यूरोपियन लोकतांत्रिक समाजवाद और रूसी साम्यवाद के प्रति उनके मन में काफी लगाव था। उन्होंने सन् 1929 में प्रारम्भ हुई वैश्विक आर्थिक मन्दी के प्रभाव और फासिज्म के उदय को देखा था लेकिन शीघ्र ही उन्हें यूरोप से निराशा हुई। स्पेन के गृह युद्ध के समय विश्व के लोकतांत्रिक कहलाने वाले देश, स्पेन में लोकतंत्र के विनाश को देखते रहे। अवीसीनिया, चीन, ब्रिटेन तथा रूस के मामले को प्रत्यक्षतः विश्व ने देखा था। साम्यवाद के बारे में डॉ0 लोहिया को कोई भ्रम नहीं रहा। समाजवादी कहलाने वालों ने किसी भी दशा में अपने–अपने साम्राज्यों से हटना स्वीकार नहीं किया। यूरोपीय सभ्यता पर उनकी रही सही आस्था भी समाप्त हो गयी।"[11]

समाजवाद एक ऐसा सपना है जिसने बीसवीं सदी में दुनिया को सार्वाधिक आन्दोलित एवं प्रभावित किया।

21वीं शताब्दी में दुनिया के अलग–अलग कोने में अलग–अलग ढंग से लोग इस लक्ष्य को हासिल करने के लिए जुझते रहेगें, इसमें शक नहीं है। जैसे ईश्वर प्राप्ति के लिए अलग–अलग मार्ग खोजे और बनाये जाते हैं वैसे ही विषमताओं का उन्मूलन करके समता परक समाज व्यवस्था के निर्माण के लिए अलग–अलग ढंग से प्रयोग किये गये हैं लेकिन इन सबकी मूल प्रेरणा और लक्ष्य एक ही रहा है।

भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में सक्रिय नवजवानों के एक समूह ने किसी एक अन्तराष्ट्रीय केन्द्र से बंधकर समाजवाद को आयात करने के बजाय अपने देश की माटी और संस्कृति से एक नयी व्यवस्था की रचना का सूत्रपात किया। इनमें आचार्य नरेन्द्र देव, अच्चयुत पटवर्धन, युसूफ मेहर अली, जय प्रकाश नारायण, मीनू मशानी, एन0 जी0 गोरे, सम्पूर्णा

नन्द, कमला देवी चट्टोपाध्याय, एम0एन0 जोशी एवं डॉ0 राम मनोहर लोहिया को भारतीय समाजवाद के प्रमुख संस्थापक माना जाता है।

इसमें डॉ0 राम मनोहर लोहिया का अपना अप्रतिम स्थान एवं महत्व है। डॉ0 राम मनोहर लोहिया के समाजवाद की अपनी विशिष्टता एवं मौलिकता है, जो उन्हें अन्य चिन्तकों से पृथक्क करती है।

डॉ0 लोहिया अपने चिन्तन में स्वतंत्रत थे। वह किसी के विचारों के अनुकरण में विश्वास नहीं रखते थे। वह मौलिक चिन्तक थे। उन्होंने भारतीय दर्शन एवं धर्म की रूढ़िवादी परम्पराओं को स्वीकार नहीं किया। डॉ0 लोहिया वस्तुतः नास्तिक थे। ईश्वर और आत्मा परमात्मा में उनकी कोई आस्था नहीं थी। फलतः उन्होंने वेद शास्त्रों की अकाट्यता, वर्ण व्यवस्था, ईश्वर के अस्तित्व आत्मा की अमरता, स्वर्ग–नरक, पार लौकिकता और मोक्ष आदि को स्वीकार नहीं किया। उनका चिन्तन मानव की समस्याओं एवं कष्टों का अन्त करने तक सीमित रहा। मानवतावादी दृष्टि, विश्व समाजवाद, समान असंगति, सामाजिक समता, विचार एवं वाणी की स्वतंत्रता, कर्म का संयम्, वर्णाधारित व्यवस्था का विरोध, जाति प्रथा का अन्त चौखम्भा राज तथा प्रशासन आदि डॉ0 लोहिया के चिन्तन के मौलिक तत्व हैं। निश्चय ही डॉ0 लोहिया भारत के मौलिक सामाजिक एवं राजनीतिक विचारकों में प्रतिष्ठित स्थान रखते हैं।[12]

डॉ0 लोहिया विद्यार्थी जीवन से ही अनेक प्रकार के संगठनों से जुड़े रहे, सन् 1920 में लोक मान्य बाल गंगाधर तिलक की मृत्यु को उन्होंने गम्भीरतापूर्वक लिया और बम्बई के मारवाड़ी कॉलेज के अपने छात्रा साथियों द्वारा हड़ताल करवा कर उसका नेतृत्व किया। यहीं से लोहिया के संघर्षमय जीवन का आरम्भ हुआ। वस्तुतः वही वह क्षण था जब डॉ0 राम मनोहर लोहिया ने भारत की राजनीति में प्रवेश किया।[13]

डॉ0 राम मनोहर लोहिया का कार्यात्मक जीवन स्वतंत्रता के लिए संघर्ष एवं समाजवाद को अनुप्रयोग में लाने का था। सन् 1920 में वह राजनीति में सक्रिय हुए तथा साइमन कमीशन का विरोध किया। भारत में समाजवाद को नूतन आयाम देने के लिए सन् 1934 में कांग्रेस

सोशलिस्ट पार्टी के स्थापना सम्मेलन में भाग लिया। भारत की स्वतंत्रता के वे प्रबल पक्ष पोषक रहे। वह कांग्रेस पार्टी में भी सदैव सक्रिय रहे। 1936 में डॉ0 लोहिया ने कांग्रेस पार्टी के विदेश मंत्री का पद संभाला डॉ0 लोहिया की गांधी एवं गांधी के विचारों में गहरी आस्था थी। वह गांधी से अपेक्षा रखते थे कि वह स्वतंत्रता आन्दोलन को छेड़ें, इसी निमित्त 1938 में इलाहाबाद से महात्मा गांधी को पत्र लिखा।

भारतीय जनता की स्वतंत्रता डॉ0 लोहिया का परम साध्य था। समाज एवं स्वतंत्रता के लिए संघर्ष और डॉ0 राम मनोहर लोहिया एक दूसरे के पर्याय हैं। वस्तुतः डॉ0 राम मनोहर लोहिया का पूरा जीवन संघर्ष की निरन्तरता का प्रतीक है। 1939 में लाहौर में कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी के अधिवेशन के अवसर पर बन्दी बनाये गये। इसी वर्ष जून में कलकत्ता जेल से छूटे एंव कांग्रेस के अखिल भारतीय अधिवेशन में भाग लिया। स्वतंत्रता आन्दोलन में डॉ0 राममनोहर लोहिया कभी शिथिल नहीं हुए। वह संघर्ष की निरन्तरता में विश्वास करते थे। हिन्दी भाषी क्षेत्रों, विशेष रूप से संयुक्त प्रान्त के जनपदों में स्वतंत्रता संघर्ष को निचले स्तर पर गतिशील बनाने का प्रयास करते रहे। मई 1940 में उत्तर प्रदेश के सुल्तानपुर में जनपदीय सम्मेलन में अध्यक्षीय भाषण दिया। इसी क्रम में डॉ0 लोहिया के सक्रिय प्रयास से उत्तर प्रदेश कांग्रेस कमेटी ने अंग्रेजों के खिलाफ प्रस्ताव पारित किया।

डॉ0 राम मनोहर लोहिया ने, न केवल जन आन्दोलन के माध्यम से भारत की लोकचेतना को जागृत करने का प्रयास किया प्रत्युत समय–समय पर लेखन के माध्यम से जन चेतना को मुखरित करने का प्रयास किया। इसी निमित्त 7 जून 1940 को *"हरिजन"* में प्रकाशनार्थ महात्मा गांधी को पहला पत्र लिखा। पुनः 15 सितम्बर 1940 को गांधी जी को दूसरा पत्र लिखा। अपने समाजवादी अरमानों को पूरा करने के लिए डॉ0 राम मनोहर लोहिया को प्रायः जेल यात्रायें करनी पड़ती थी। 1 जूलाई 1940 को दो वर्ष की जेल की सजा सुनायी गयी। 12 अगस्त को सुल्तानपुर से बरेली जेल भेजे गये। इसी वर्ष 15 सितम्बर को गांधी जी के नाम एक और पत्र लिखा। 1 सितम्बर 1941 को डॉ0 लोहिया बरेली जेल से रिहा हुए। 23 अप्रैल 1942 सेवा ग्राम में गांधी जी से वार्ता की। 8 अगस्त